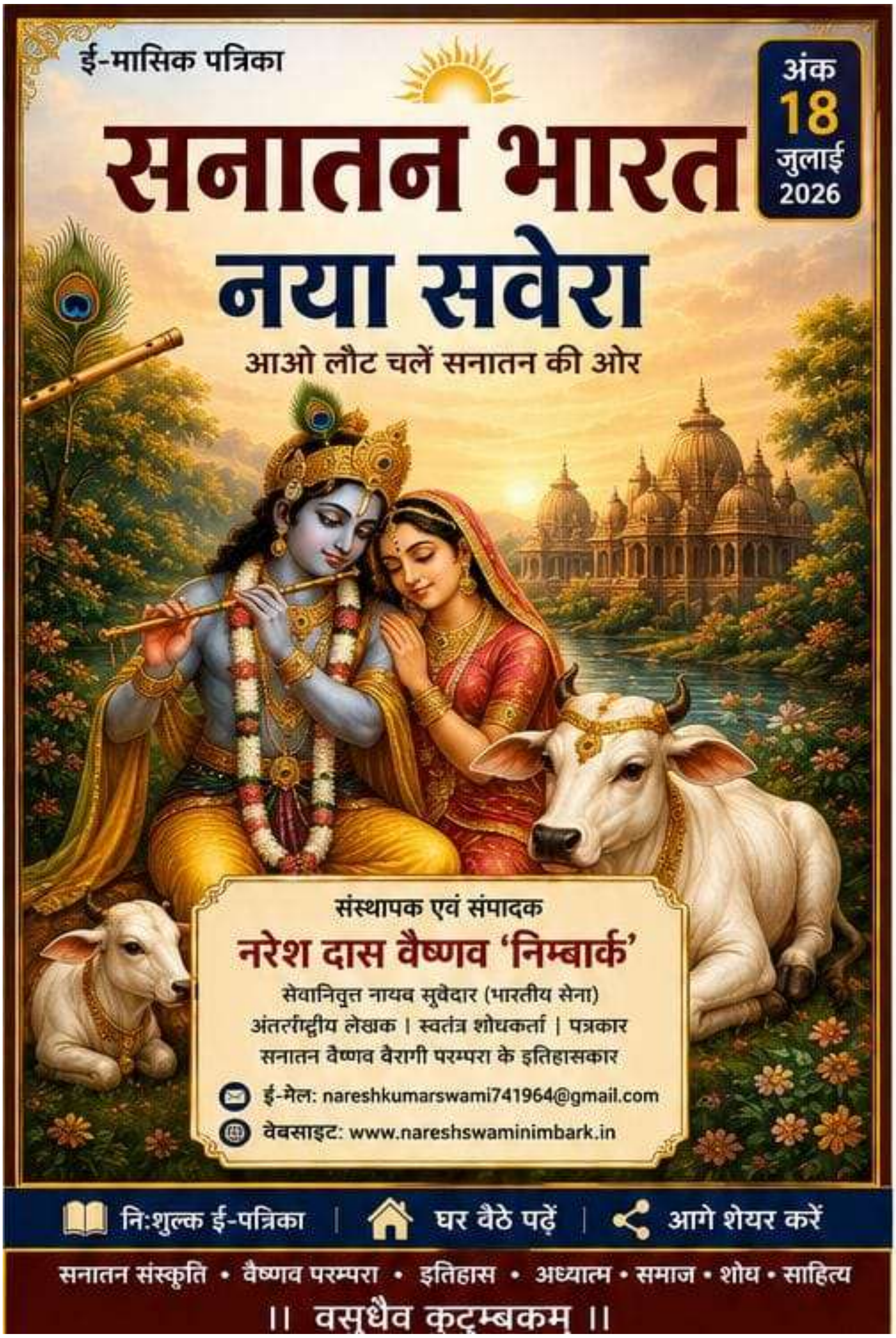

ई-मासिक पत्रिका
अंक 18 जुलाई 2026
सनातन भारत
नया सवेरा
आओ लौट चलें सनातन की ओर
संस्थापक एवं संपादक
नरेश दास वैष्णव 'निम्बार्क'
सेवानिवृत्त नायब सूबेदार (भारतीय सेना)
अंतर्राष्ट्रीय लेखक | स्वतंत्र शोधकर्ता | पत्रकार
सनातन वैष्णव वैरागी परम्परा के इतिहासकार
ई-मेल: nareshkumarswami741964@gmail.com
वेबसाइट: www.nareshswaminimbark.in
नि:शुल्क ई-पत्रिका | घर बैठे पढ़ें | आगे शेयर करें
सनातन संस्कृति • वैष्णव परम्परा • इतिहास • अध्यात्म • समाज • शोध • साहित्य
।। वसुधैव कुटुम्बकम् ।।

सनातन भारत नया सवेरा

आओ लौट चलें सनातन की ओर

अंक 18 · जुलाई 2026

ई-मासिक पत्रिका

संस्थापक सम्पादक

नरेश दास वैष्णव 'निम्बार्क'

सेवानिवृत्त सैन्य अधिकारी | कारगिल युद्ध योद्धा | संयुक्त राष्ट्र शांति सैनिक, सिएरा लियोन 2000

इतिहासकार, सनातन वैष्णव बैरागी परंपरा

www.nareshswaminimbark.in

सम्पादकीय — जुलाई 2026 | अंक 18

✦ सनातन — हमारी पहचान, हमारा गौरव ✦

प्रिय सनातन परिवार,

राधे-राधे! 🙏

"सनातन भारत नया सवेरा" के अठारहवें अंक के साथ पुनः आपके समक्ष उपस्थित होते हुए हृदय में असीम आनन्द का अनुभव हो रहा है। यह पत्रिका केवल शब्दों का संकलन नहीं — यह एक धर्म-यात्रा है, एक सनातनी जागृति का स्वर है, जो निरन्तर 190 से अधिक देशों तक नि:शुल्क पहुँचाई जा रही है। इस पत्रिका के प्रचार-प्रसार में हमने आज तक किसी से एक पैसा नहीं लिया है, और न कभी लेंगे — यह केवल सनातन-सेवा का संकल्प है।

इस अंक की आत्मा

इस अंक की रचना हमने रामचरितमानस, महाभारत, स्वतंत्रता संग्राम और सनातन जीवन-मूल्यों — इन चारों धाराओं को एक साथ पिरोकर की है। श्रीराम के पूर्वजों के त्याग से लेकर श्रवण कुमार की मार्मिक गाथा तक, पाण्डव-कौरव संघर्ष की अनिवार्यता से लेकर श्रीमद्भगवद्गीता के अमर सन्देश तक, जगद्गुरु निम्बार्काचार्य जी के दर्शन से लेकर हम्पी-किष्किंधा की पावन धरा तक – प्रत्येक अध्याय का उद्देश्य एक ही है: हमारी नई पीढ़ी को यह स्मरण कराना कि हमारी जड़ें कितनी गहरी और कितनी गौरवशाली हैं।

11 अध्यायों का शुभ संकल्प

इस अंक में कुल 11 अध्याय — एक शुभ संख्या — सम्मिलित हैं। वीर छोटेलाल वैष्णव जी के बलिदान की गाथा तथा सनातन परिवार पर एक ईमानदार आत्ममन्थन भी इस अंक की शोभा बढ़ाते हैं — यह दर्शाते हुए कि सनातन केवल अतीत की गाथा नहीं, अपितु वर्तमान में भी उतना ही जीवन्त है।

नया संकल्प

आज जब हमारे बच्चे पश्चिमी सुपरहीरो की कथाओं में डूबे हैं, तब यह अत्यन्त आवश्यक है कि हम उन्हें यह भी बताएँ कि हमारी अपनी धरती पर भी ऐसे योद्धा, संत, आचार्य और बलिदानी हुए हैं, जिनकी गाथाएँ किसी काल्पनिक कथा से कम नहीं। यही इस अंक का मूल संकल्प है — अपनी जड़ों की ओर पुनः लौटना, नया सवेरा लाना।

चिर नरेश दास वैष्णव निम्बार्क

संस्थापक-सम्पादक | सेवानिवृत्त सैन्य अधिकारी | सनातन वैष्णव इतिहासकार

www.nareshswaminimbark.in

जय सीताराम! जय सनातन! 🙏

विषय-सूची — अंक 18, जुलाई 2026

सम्पादकीय

• सम्पादकीय · सनातन — हमारी पहचान, हमारा गौरव

रामचरितमानस विशेष

• अध्याय 1 · श्रीरामचन्द्र भगवान की पीढ़ी और उनके पूर्वजों के महान कार्य

• अध्याय 2 · श्रवण-वध और पितृ-शाप

• अध्याय 3 · राजा दशरथ के घर चार पुत्रों की उत्पत्ति और नामकरण संस्कार

महाभारत विशेष

• अध्याय 4 · पाण्डवों और कौरवों के युद्ध की नौबत क्यों आई

• अध्याय 5 · स्वर्णप्रस्थ — पाँच गाँवों में सम्मिलित सोने का नगर

• अध्याय 6 · स्वर्णप्रस्थ का प्राकट्य — आदि-इतिहास और भौगोलिक धरातल

• अध्याय 7 · श्रीमद्भगवद्गीता का सार — निष्काम कर्मयोग का अमर सन्देश

हमारे अध्याय — इतिहास, दर्शन और चिन्तन

• अध्याय 8 · वीर छोटेलाल वैष्णव — बलिदान और विरासत

• अध्याय 9 · जगद्गुरु निम्बार्काचार्य जी — द्वैताद्वैत सिद्धान्त, जीवन और दर्शन

• अध्याय 10 · सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा की जड़ें — हम्पी में शबरी ने राम को खिलाए थे जूठे बेर

• अध्याय 11 · सनातन परिवार, समय पर विवाह और नई पीढ़ी की दिशा

समापन

• लेखक-परिचय

• उपसंहार — सनातन की अमर यात्रा



रामचरितमानस विशेष

अध्याय — 1 : श्रीरामचन्द्र भगवान की पीढ़ी और उनके पूर्वजों के महान कार्य

— जब एक वंश की गरिमा उसके पूर्वजों के त्याग से बनी —

भूमिका — वंश नहीं, संस्कारों की परम्परा

श्रीराम केवल एक राजवंश में जन्मे राजकुमार नहीं थे — वे उस सूर्यवंश (रघुकुल) की परिणति थे, जिसकी नींव सत्य, त्याग, तप और वचन-पालन पर रखी गई थी। इस वंश के प्रत्येक पूर्वज ने अपने आचरण से ऐसा आदर्श स्थापित किया, जिसने आगे चलकर श्रीराम के मर्यादा पुरुषोत्तम स्वरूप की नींव तैयार की।

वंश का उद्गम — वैवस्वत मनु से इक्ष्वाकु तक

सृष्टि के आरम्भ में ब्रह्माजी से मरीचि, मरीचि से कश्यप, कश्यप से सूर्यदेव और सूर्यदेव से वैवस्वत मनु का जन्म हुआ। मनु के पुत्र इक्ष्वाकु ने अयोध्या को अपनी राजधानी बनाकर इस वंश की स्थापना की — इसीलिए श्रीराम को वाल्मीकि रामायण में "इक्ष्वाकुवंशप्रभवः" कहा गया है।

(संदर्भ: भारतकोश — रघु वंश; Wikipedia — रघुकुल)

राजा हरिश्चन्द्र — सत्य की प्रतिमूर्ति

इसी वंश में हरिश्चन्द्र हुए, जिन्होंने सत्य की रक्षा हेतु अपना राज्य, धन और परिवार तक त्याग दिया, परन्तु वचन नहीं तोड़ा।

राजा सगर और भगीरथ — गंगावतरण की गाथा

राजा सगर के 60,000 पुत्र एक शाप के कारण भस्म हो गए, परन्तु उन्होंने धर्म का मार्ग नहीं छोड़ा। सगर के प्रपौत्र भगीरथ ने अपने पूर्वजों के उद्धार हेतु घोर तपस्या कर माँ गंगा को स्वर्ग से पृथ्वी पर उतारा। "भगीरथ प्रयत्न" मुहावरा आज भी असाधारण परिश्रम के लिए प्रयुक्त होता है।

(संदर्भ: भारतकोश — रघु वंश; Wikipedia — रघुकुल)

राजा दिलीप और राजा रघु — दान और वचन-पालन

भगीरथ के पितामह दिलीप गौ-सेवा और धर्म-पालन के लिए विख्यात थे। उनके पौत्र राजा रघु ने अश्वमेध यज्ञ हेतु समस्त धन ब्राह्मणों को दान कर दिया — इन्हीं रघु के नाम पर इस वंश का नाम "रघुकुल" पड़ा।

अज और दशरथ — मर्यादा की अन्तिम कड़ी

रघु के पौत्र अज तथा उनके पुत्र दशरथ ने भी इसी परम्परा का निर्वहन किया। दशरथ जी के यहाँ ही श्रीराम, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न ने जन्म लेकर इस वंश की कीर्ति को चरमोत्कर्ष पर पहुँचाया।

✅ **बच्चों के लिए शिक्षा:** श्रीराम का मर्यादा-पालन कोई आकस्मिक गुण नहीं था — यह उनके पूर्वजों द्वारा पीढ़ी-दर-पीढ़ी सींचे गए सत्य, त्याग और वचन-निष्ठा के संस्कारों का सुफल था।

(संदर्भ: वाल्मीकि रामायण — बालकाण्ड; भारतकोश — रघु वंश; हिन्दी विकिपीडिया — रघुकुल)

अध्याय — 2 : श्रवण-वध और पितृ-शाप — जब राजा दशरथ को मिला मृत्यु का वरदान

एक भूल जिसने आगे चलकर श्रीराम-अवतार का मार्ग प्रशस्त किया

रात्रि का शिकार – घातक भ्रम

अयोध्या-नरेश महाराज दशरथ शब्दभेदी बाण-विद्या में अद्वितीय निपुणता रखते थे। यह वह दिव्य कला थी जिसमें धनुर्धर बिना लक्ष्य देखे, केवल शब्द के आधार पर बाण का संधान करता था। एक रात्रि, सरयू के शांत तट पर, अंधकार सघन था। जल में हुई हल्की खड़खड़ाहट सुनकर महाराज ने उसे किसी पशु का जलपान समझा और अपनी प्रवीणता के अभिमान में बाण छोड़ दिया।

किंतु नियति ने कुछ और ही रचा था। वह पशु नहीं, अपितु श्रवण कुमार थे – एक परम पितृभक्त युवक, जो अपने अंधे और वृद्ध माता-पिता की प्यास बुझाने हेतु जल भरने आए थे। बाण उनके हृदय को बींध गया।

घायल श्रवण के मुख से जो वाक्य निकले, वे आज भी सनातन संस्कृति में पितृभक्ति के आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित हैं – "हे राजन्! मेरी मृत्यु का दुःख नहीं, परन्तु मेरे वृद्ध माता-पिता की प्यास कौन बुझाएगा?"

दशरथ का पश्चाताप और सत्य-स्वीकृति

अपनी भीषण भूल का बोध होते ही महाराज दशरथ का हृदय ग्लानि से भर उठा। उन्होंने न तो सत्य को छिपाया, न किसी बहाने का सहारा लिया। स्वयं जल का पात्र लेकर वे श्रवण के अंधे माता-पिता के पास पहुँचे और अपनी भूल स्वीकार की। यह घटना क्षत्रिय-धर्म की सर्वोच्च कसौटी है – दायित्व से पलायन नहीं, अपितु अपने कृत्य की जिम्मेदारी उठाना ही सच्चे राजधर्म का लक्षण है। (संदर्भ: भारतकोश – श्रवण कुमार; वाल्मीकि रामायण, अयोध्याकाण्ड)

पुत्र-वियोग का करुण शाप

पुत्र-शोक से विक्षिप्त, अंधे वृद्ध दंपति ने अपने अंतिम श्वासों के साथ महाराज को शाप दिया – "जिस प्रकार हम आज पुत्र-वियोग में तड़पकर प्राण त्याग रहे हैं, उसी प्रकार तुम भी एक दिन अपने प्रिय पुत्र के वियोग में तड़प-तड़पकर प्राण त्यागोगे।"

यह शाप कालांतर में अक्षरशः सत्य सिद्ध हुआ। वर्षों पश्चात्, जब कैकेयी के वचनों से श्रीराम को चौदह वर्ष के वनवास पर जाना पड़ा, महाराज दशरथ पुत्र-वियोग की असह्य पीड़ा सहन न कर सके। "राम! राम!" पुकारते हुए उन्होंने अपने प्राण त्याग दिए।

✅ *सनातन शिक्षा:* कर्म का फल कभी टलता नहीं, चाहे वह अनजाने में ही क्यों न किया गया हो। श्रवण कुमार का चरित्र आज भी सन्तान-धर्म एवं पितृभक्ति का सर्वोच्च आदर्श बना हुआ है, तथा दशरथ का पश्चाताप हमें सिखाता है कि सत्य-स्वीकृति ही सच्चे नेतृत्व की पहचान है।

(संदर्भ: वाल्मीकि रामायण – अयोध्याकाण्ड, सर्ग 63; भारतकोश – श्रवण कुमार)

अध्याय — 3 : राजा दशरथ के घर चार पुत्रों की उत्पत्ति और नामकरण संस्कार

— जब पुत्रकामेष्टि यज्ञ के फलस्वरूप अयोध्या में चार दिव्य शिशुओं का जन्म हुआ —

पुत्रकामेष्टि यज्ञ

महर्षि वशिष्ठ के परामर्श पर राजा दशरथ ने ऋष्यश्रृंग ऋषि को आमन्त्रित कर पुत्रकामेष्टि यज्ञ सम्पन्न कराया — मखौड़ा धाम में। अग्निदेव ने प्रकट होकर दिव्य खीर प्रदान की।



This Photo by Unknown Author is licensed under CC BY-NC-ND

(संदर्भ: हिन्दी विकिपीडिया — दशरथ, बालकाण्ड; भारतकोश — दशरथ)

चार दिव्य शिशुओं का जन्म

चैत्र शुक्ल नवमी, पुनर्वसु नक्षत्र में महारानी कौशल्या से श्रीराम, कैकेयी से भरत, तथा सुमित्रा से लक्ष्मण और शत्रुघ्न — दो पुत्रों का जन्म हुआ।

नामकरण संस्कार

महर्षि वशिष्ठ ने विधिपूर्वक चारों राजकुमारों का नामकरण किया — रामचन्द्र, भरत, लक्ष्मण और शत्रुघ्न।

✅ **सनातन शिक्षा:** नामकरण संस्कार यह विश्वास दर्शाता है कि नाम व्यक्ति के स्वभाव और भविष्य को दिशा देता है।

(संदर्भ: भारतकोश — दशरथ; The Bridal Box — राम जन्म की कथा)

महाभारत विशेष

अध्याय — 4 : पाण्डवों और कौरवों के युद्ध की नौबत क्यों आई

जब धर्म और अधर्म का संघर्ष अपरिहार्य हो गया

जन्म से ही वैमनस्य

महाराज पाण्डु की असामयिक मृत्यु के पश्चात् पाँचों पाण्डव – युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन, नकुल एवं सहदेव – हस्तिनापुर लौट आए और अपने चाचा धृतराष्ट्र के संरक्षण में पले-बढ़े। किंतु जिस राजमहल को उनका आश्रय होना चाहिए था, वही आगे चलकर उनके संघर्ष का केंद्र बन गया। धृतराष्ट्र के ज्येष्ठ पुत्र दुर्योधन के मन में पाण्डवों के प्रति ईर्ष्या बचपन से ही घर कर गई थी – विशेषतः भीम के अतुलनीय बल एवं युधिष्ठिर की धर्मपरायणता को देखकर।

यह ईर्ष्या शीघ्र ही विद्वेष में परिवर्तित हुई। एक अवसर पर दुर्योधन ने भीम के भोजन में विष मिलाकर उन्हें मूर्च्छित कर दिया और उनके शरीर को गंगा में प्रवाहित कर दिया। सौभाग्यवश भीम नागलोक जा पहुँचे, जहाँ नागराज वासुकि ने उन्हें दिव्य रसायन-पान कराकर न केवल पुनर्जीवित किया, अपितु उनकी शक्ति को सहस्रगुणा बढ़ा दिया।

यह घटना स्पष्ट करती है कि दुर्योधन का द्वेष कोई आकस्मिक विकार नहीं था, अपितु बाल्यकाल से ही सिंचित एक विषबेल थी, जिसका फल कालांतर में समस्त कुरुवंश को भस्म कर गया – "जो बालक जिस भाव से जन्म लेता है, वह वृक्ष बनकर उसी भाव को प्रकट करता है। दुर्योधन का द्वेष बचपन का बीज था, कुरुक्षेत्र उसका विषवृक्ष।"

लाक्षागृह का षड्यंत्र

बाल्यावस्था की ईर्ष्या जब युवावस्था में पहुँची, तो दुर्योधन ने पाण्डवों के समूल नाश की योजना बनाई। उसने अपने मंत्री पुरोचन के माध्यम से वारणावत नामक नगर में लाख, घृत एवं अन्य ज्वलनशील पदार्थों से एक भवन का निर्माण करवाया – जिसे इतिहास "लाक्षागृह" के नाम से जानता

है। कुंती एवं पाँचों पाण्डवों को कूटनीतिपूर्वक वहाँ निवास हेतु भेजा गया, यह योजना बनाकर कि रात्रि में भवन में अग्नि लगाकर सबको भस्म कर दिया जाएगा और इसे दुर्घटना का रूप दे दिया जाएगा।

किंतु महात्मा विदुर, जो सदैव धर्म एवं न्याय के पक्षधर रहे, इस षड्यंत्र से पूर्व ही सचेत हो गए थे। उन्होंने गुप्त संकेतों द्वारा युधिष्ठिर को सावधान किया। परिणामस्वरूप पाण्डवों ने भवन के नीचे पूर्व-निर्मित एक गुप्त सुरंग के माध्यम से रात्रि में ही पलायन कर लिया, और लाक्षागृह में एक निषाद स्त्री तथा उसके पाँच पुत्र दुर्भाग्यवश जल मरे — जिन्हें दुर्योधन ने पाण्डवों की मृत्यु समझकर उत्सव मनाया। (संदर्भ: Wikipedia — Mahabharata, Lakshagraha)

द्यूत-क्रीड़ा और वनवास

वर्षों पश्चात् जब पाण्डव इंद्रप्रस्थ में सुसंपन्न राज्य स्थापित कर चुके थे, दुर्योधन की ईर्ष्या पुनः प्रज्वलित हुई। उसने अपने मामा शकुनि के साथ मिलकर एक कूटनीतिक चाल चली — युधिष्ठिर को द्यूत-क्रीड़ा (जुए) के निमंत्रण में उलझाया गया। शकुनि के छलपूर्ण, कपटपूर्ण पासों के समक्ष युधिष्ठिर एक-एक कर अपना संपूर्ण राज्य, धन-संपत्ति, भाई और अंततः स्वयं को तथा द्रौपदी को भी दाँव पर लगाकर हार बैठे।

इस पराजय के पश्चात् जो घटित हुआ, वह भारतीय इतिहास का सर्वाधिक कलंकित प्रसंग है — भरी राजसभा में दुःशासन ने द्रौपदी को केश पकड़कर घसीटते हुए ला खड़ा किया और उनका सार्वजनिक अपमान करने का दुःसाहस किया। भगवान श्रीकृष्ण की कृपा से द्रौपदी का चीरहरण असफल रहा, किंतु इस अपमान ने पाण्डवों के हृदय में प्रतिशोध की जो अग्नि प्रज्वलित की, वह अंततः कुरुक्षेत्र तक जा पहुँची।

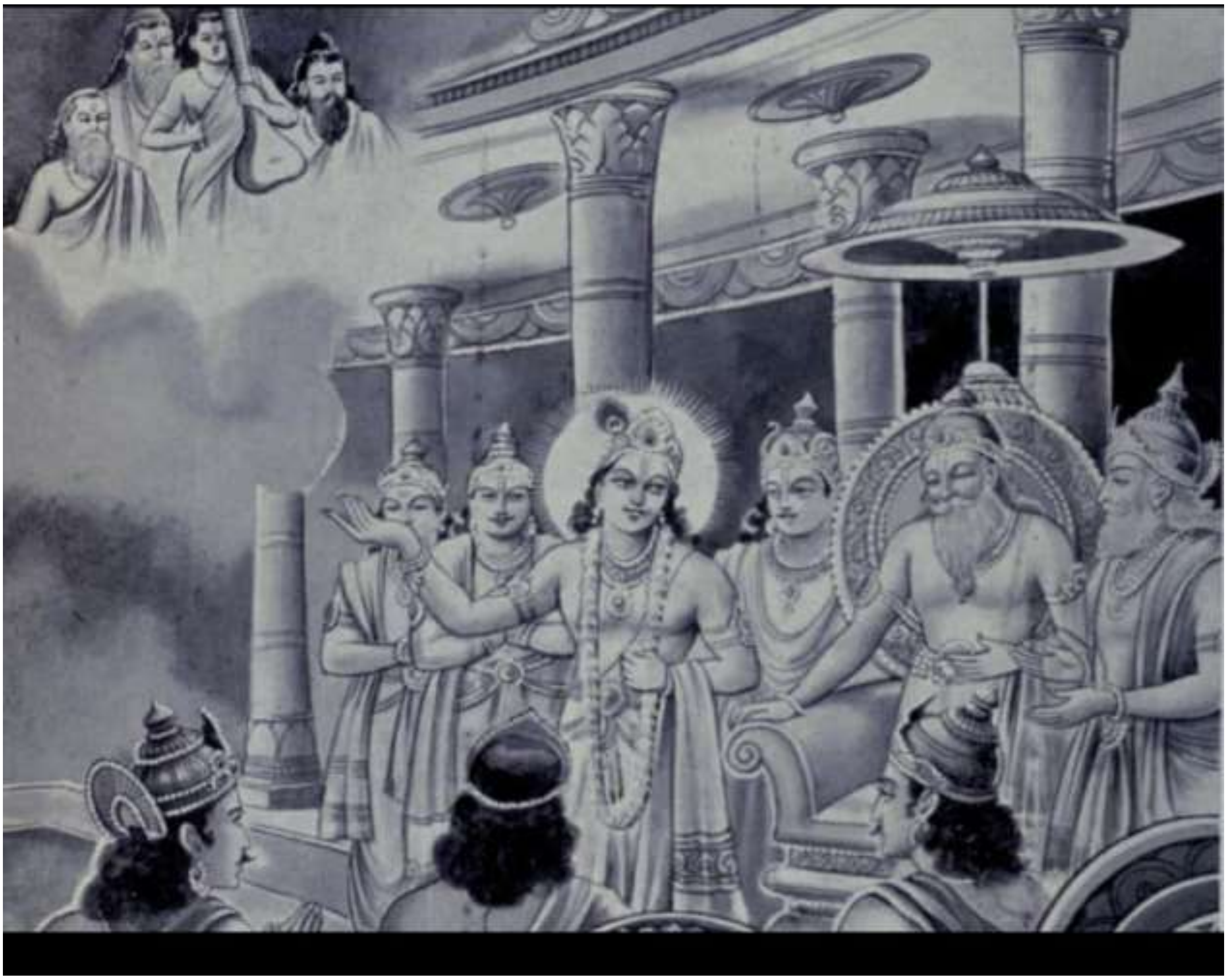
छल-पूर्ण द्यूत की शर्तों के अनुसार पाण्डवों को तेरह वर्ष का वनवास एवं अज्ञातवास भोगना पड़ा। इस दीर्घ अवधि में उन्होंने अपार कष्ट सहे, किंतु धर्म का मार्ग नहीं त्यागा। वनवास की अवधि पूर्ण होने पर जब युधिष्ठिर ने अपना राज्य वापस माँगा, तो दुर्योधन ने स्पष्ट एवं अहंकारपूर्ण शब्दों में इनकार कर दिया — यहाँ तक कि "सुई की नोक बराबर भूमि भी बिना युद्ध के नहीं दूँगा" जैसी उक्ति द्वारा उसने अपनी अडिगता प्रदर्शित की।

इस प्रकार, जब समस्त शांति-प्रयास — स्वयं भगवान श्रीकृष्ण द्वारा किया गया शांति-दूत का कार्य भी — विफल हो गए, तब युद्ध के अतिरिक्त कोई अन्य मार्ग शेष नहीं रहा।

✅ *संदेश:* महाभारत का युद्ध विजय की लालसा से नहीं, अपितु धर्म-रक्षा हेतु अंतिम विकल्प के रूप में हुआ। यह हमें सिखाता है कि जब अन्याय अपनी चरम सीमा पर पहुँच जाए और सभी संवाद के मार्ग अवरुद्ध हो जाएँ, तब सत्य एवं धर्म की रक्षा हेतु संघर्ष अनिवार्य हो जाता है – यही सनातन धर्म का शाश्वत संदेश है।

(संदर्भ: Wikipedia — Mahabharata, Lakshagraha; वेद व्यास रचित महाभारत, सभापर्व एवं वनपर्व)

अध्याय — 5 : स्वर्णप्रस्थ — पाँच गाँवों में सम्मिलित सोने का नगर



— जब श्रीकृष्ण ने शान्ति हेतु सोनीपत की भी माँग की —

पाँच गाँवों का पुनरावलोकन

शान्ति-स्थापना हेतु श्रीकृष्ण ने जो पाँच नगर माँगे, विकिपीडिया एवं अन्य स्रोतों के अनुसार वे थे — स्वर्णप्रस्थ (सोनीपत), पर्णप्रस्थ (पानीपत), व्याघ्रप्रस्थ (बागपत), तिलप्रस्थ (तिलपत) और इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली)।

(संदर्भ: हिन्दी विकिपीडिया — इन्द्रप्रस्थ; TV9 Hindi)

स्पष्टीकरण: *यह पहचान (स्वर्णप्रस्थ = सोनीपत) लोक-परम्परा, क्षेत्रीय मान्यता एवं आधुनिक शोध-स्रोतों पर आधारित है। महाभारत के मूल संस्कृत श्लोक (उद्योगपर्व 31.19) में इन पाँच नगरों के नाम कुछ भिन्न रूप में — अविस्थल, वृकस्थल, माकन्दी, वारणावत — मिलते हैं। पाठक इसे लोक-श्रद्धा एवं क्षेत्रीय पहचान की दृष्टि से पढ़ें।*

इतिहास की विडम्बना

"सुई की नोक भर भूमि भी बिना युद्ध के नहीं दूँगा!"

दुर्योधन की इसी हठ के कारण स्वर्णप्रस्थ सहित समस्त पाँचों नगर पाण्डवों को नहीं मिल सके — यही हठ महाभारत के विनाशकारी युद्ध का तात्कालिक कारण बना।

✅ **सन्देश:** एक नगर की माँग जो केवल जीवन-निर्वाह हेतु थी, उसे भी अस्वीकार करना — यह दर्शाता है कि अहंकार कैसे विवेक को निगल जाता है।

अध्याय — 6 : स्वर्णप्रस्थ का प्राकट्य — आदि-इतिहास और भौगोलिक धरातल

स्वर्णप्रस्थ – महाभारत-कालीन गाथा

(पुस्तक-अंश: स्वर्णप्रस्थ की गाथा – 3526 वर्षों का इतिहास, लेखक: नरेश दास वैष्णव निम्बार्क)

पाँच नगरों की माँग और स्वर्णप्रस्थ का उल्लेख

द्वापर युग में, जब पाण्डवों ने बारह वर्ष का वनवास एवं एक वर्ष का अज्ञातवास पूर्ण कर लिया, तो उन्होंने अपने पैतृक राज्य का न्यायोचित भाग माँगा। किंतु जब दुर्योधन ने राज्य लौटाने से स्पष्ट इनकार कर दिया, तब स्वयं भगवान श्रीकृष्ण शांति-दूत बनकर हस्तिनापुर की राजसभा में पधारे। उन्होंने युद्ध टालने हेतु एक अंतिम, अत्यंत विनम्र प्रस्ताव रखा – कि पाण्डवों को समस्त राज्य न सही, केवल पाँच ग्राम अथवा नगर ही प्रदान कर दिए जाएँ, जिससे उनकी जीविका चल सके और युद्ध की विभीषिका टल जाए।

जिन पाँच नगरों की याचना की गई थी, उनमें इंद्रप्रस्थ (वर्तमान दिल्ली), सोनप्रस्थ (जिसे उस काल में स्वर्णप्रस्थ भी कहा जाता था), पानीपत (पाणिप्रस्थ), बागपत (व्याघ्रप्रस्थ) एवं तिलपत (तिलप्रस्थ) सम्मिलित थे – जिन्हें सामूहिक रूप से "पाँच प्रस्थ" अथवा "पंचग्राम" के नाम से जाना जाता है। यह वही ऐतिहासिक सूची है, जिसमें स्वर्णप्रस्थ अर्थात् आज का सोनीपत गौरवपूर्ण स्थान रखता है।

दुर्योधन का अहंकार और युद्ध की अनिवार्यता

किंतु दुर्योधन का अहंकार इतना प्रबल था कि उसने इस अल्प एवं न्यायसंगत माँग को भी अस्वीकार करते हुए वह ऐतिहासिक उद्घोष किया, जो आज भी अन्याय के प्रतीक स्वरूप स्मरण किया जाता है – कि वह सुई की नोक बराबर भूमि भी बिना युद्ध के पाण्डवों को नहीं देगा। इस अहंकारपूर्ण अस्वीकृति ने ही उस विनाशकारी महासंग्राम को अनिवार्य बना दिया, जिसे इतिहास "महाभारत का युद्ध" के नाम से स्मरण करता है।

इस दृष्टि से देखा जाए, तो स्वर्णप्रस्थ केवल एक भौगोलिक स्थान मात्र नहीं रहा – यह उस ऐतिहासिक क्षण का साक्षी बना, जब धर्म और अधर्म के मध्य समझौते की अंतिम संभावना भी

समाप्त हो गई। यह भूमि, जो कभी शांति-प्रस्ताव का एक अंश बनने जा रही थी, अंततः उस युद्ध के परोक्ष कारणों में गिनी जाती है, जिसने संपूर्ण आर्यावर्त का भाग्य निर्धारित किया।

सामरिक एवं सांस्कृतिक निरंतरता

एक सैन्य इतिहासकार की दृष्टि से यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि स्वर्णप्रस्थ की भौगोलिक स्थिति – कुरुक्षेत्र के निकटवर्ती, यमुना के सामीप्य में स्थित – उसे स्वाभाविक रूप से सामरिक महत्व प्रदान करती थी। महाभारत-कालीन सेनाओं के संचरण-मार्ग, रसद-आपूर्ति एवं व्यूह-रचना में इस क्षेत्र की भूमिका को नकारा नहीं जा सकता। यही कारण है कि पुरातात्विक उत्खनन में प्राप्त "पेंटेड ग्रे वेयर" मृद्भांड, जो हस्तिनापुर एवं कुरुक्षेत्र से भी प्राप्त हुए हैं, इस तथ्य की भौतिक पुष्टि करते हैं कि स्वर्णप्रस्थ महाभारत-कालीन सभ्यता का जीवंत एवं सक्रिय अंग था।

✅ *निष्कर्ष:* स्वर्णप्रस्थ की गाथा केवल नामकरण अथवा पुरातात्विक साक्ष्यों तक सीमित नहीं है – यह उस युगांतरकारी क्षण की मूक साक्षी है, जब न्याय की अंतिम याचना अस्वीकृत हुई और धर्मयुद्ध अनिवार्य हो गया। 3526 वर्षों की यह यात्रा हमें स्मरण कराती है कि प्रत्येक भूमि अपने भीतर इतिहास की अनकही परतें समेटे रहती है, जिन्हें उजागर करना ही सच्चे इतिहासकार का धर्म है।

(संदर्भ: महाभारत – उद्योगपर्व; नरेश दास वैष्णव निम्बार्क, "स्वर्णप्रस्थ की गाथा – 3526 वर्षों का इतिहास")

अध्याय — 7 : श्रीमद्भगवद्गीता का सार — निष्काम कर्मयोग का अमर सन्देश



— जब कुरुक्षेत्र के रणक्षेत्र में स्वयं भगवान ने मानवता को जीवन का सर्वोच्च सत्य सिखाया —

भूमिका — अर्जुन का विषाद

महाभारत युद्ध के प्रारम्भ में, जब अर्जुन ने युद्धभूमि में अपने ही स्वजनों — गुरुजनों, पितामह, भाई-बन्धुओं — को खड़ा देखा, तो उनका हृदय शोक और मोह से भर उठा। उन्होंने अपने गाण्डीव धनुष को त्यागकर युद्ध करने से इनकार कर दिया। यहीं से आरम्भ होता है संसार का सबसे महान दार्शनिक संवाद — श्रीमद्भगवद्गीता।

कर्मण्येवाधिकारस्ते — कर्मयोग का मूल सिद्धान्त

"कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन। मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते संगोऽस्त्वकर्मणि॥"

भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को समझाया कि मनुष्य को केवल कर्म करने का अधिकार है, उसके फल पर नहीं। यही निष्काम कर्मयोग का मूल सिद्धान्त है — अपने कर्तव्य को पूर्ण निष्ठा से निभाना, परन्तु उसके परिणाम की चिन्ता किए बिना।

(संदर्भ: श्रीमद्भगवद्गीता, अध्याय 2, श्लोक 47; Gita Supersite)

स्वधर्म का पालन — चाहे कितना भी कठिन क्यों न हो

श्रीकृष्ण ने अर्जुन को यह भी सिखाया कि अपने धर्म अथवा कर्तव्य का पालन करना ही सर्वोच्च योग है, चाहे वह कितना भी कठिन प्रतीत हो। दूसरे के धर्म का अनुसरण करने की अपेक्षा अपने ही धर्म में मृत्यु भी कल्याणकारी है — यही "स्वधर्मे निधनं श्रेयः" का सन्देश है।

आज के जीवन में गीता की प्रासंगिकता

गीता का यह सन्देश केवल युद्धभूमि तक सीमित नहीं — यह प्रत्येक विद्यार्थी, प्रत्येक कर्मचारी, प्रत्येक गृहस्थ के लिए है। जब हम परिणाम की चिन्ता किए बिना, पूर्ण निष्ठा से अपना कर्तव्य करते हैं, तो न केवल हमारी कार्यक्षमता बढ़ती है, अपितु मन को भी शान्ति प्राप्त होती है। असफलता का भय तभी समाप्त होता है जब हम यह स्वीकार कर लेते हैं कि परिणाम ईश्वर के अधीन है, और हमारा धर्म केवल प्रयास करना है।

(संदर्भ: Haribhoomi — Bhagavad Gita Karmayoga; Prabhat Khabar — Gita Updesh)

✅ **बच्चों के लिए शिक्षा:** गीता हमें सिखाती है कि जीवन में सफलता-असफलता से अधिक महत्वपूर्ण है — अपना कर्तव्य पूर्ण निष्ठा और समर्पण के साथ निभाना। यही सच्चा कर्मयोग है, और यही सनातन धर्म का जीवन्त सार है।

हमारे अध्याय – इतिहास, दर्शन और चिन्तन



अध्याय — 8 : वीर छोटेलाल वैष्णव — बलिदान और विरासत

–जब एक स्वतंत्रता सेनानी का त्याग दशकों बाद पुनः विजय-गाथा बनकर लौटा –

+भूमिका – इतिहास कभी मौन नहीं रहता

इतिहास प्रतीक्षा करता है – उस क्षण की, जब उसके पन्नों में दबा हुआ त्याग किसी नई पीढ़ी की उपलब्धि बनकर पुनः जीवन्त हो उठे। ऐसा ही एक क्षण हरियाणा ने तब देखा, जब इस परिवार की एक कड़ी संवैधानिक पद तक पहुँची – और यह उपलब्धि उसी वंश में आकर ठहरी, जिसके पूर्वज ने कभी अंग्रेज़ी हुकूमत और पटौदी रियासत, दोनों मोर्चों पर एक साथ संघर्ष करते हुए जेल की चक्की पीसी थी।

+दो शत्रुओं से लोहा

महान स्वतंत्रता सेनानी स्व. श्री छोटेलाल जी वैष्णव – गुरुग्राम जिले की पटौदी तहसील के गाँव मौजाबाद में 4 जून 1908 को, पिता स्व. श्री बाबू तोता राम जी के घर जन्मे – इसलिए महान थे,

क्योंकि उन्होंने अकेले नहीं, अपितु एक साथ दो शक्तिशाली सत्ताओं से संघर्ष किया – अंग्रेज़ी साम्राज्य और पटौदी के नवाब का शासन। मात्र 21 वर्ष की आयु में पढ़ाई त्यागकर उन्होंने क्रान्तिकारी गतिविधियों को अपना जीवन बना लिया। 1939 में उन्होंने पटौदी रियासत को गुलामी की बेड़ियों से मुक्त कराने हेतु 'प्रजामंडल' की स्थापना की।

+ जेल की यातना और सर्वस्व-त्याग

इससे भयभीत होकर नवाब ने उन्हें रियासत में प्रवेश से प्रतिबन्धित कर जेल में डाल दिया, जहाँ उन्हें प्रतिदिन 18 सेर अनाज हाथ से पिसवाया जाता था – घोर यातना का प्रतीक। 1940 में नवाब ने प्रतिशोधस्वरूप उनके घर का सामान, पशुधन और भूमि-सम्पत्ति तक जब्त कर ली। फिर भी उनका संकल्प नहीं डिगा।

"स्वतंत्रता के पश्चात् भी छोटेलाल जी ने अपनी कुर्बानियों के बदले कोई व्यक्तिगत लाभ या राजनीतिक पद स्वीकार नहीं किया – यही उनकी निस्वार्थ सेवा की सच्ची पहचान थी।"

उनकी इसी निष्ठा के लिए 1972 में केन्द्र सरकार ने उन्हें 'ताम्रपत्र' से सम्मानित किया। 19 जून 2004 को यह महान सपूत पंचतत्व में विलीन हो गया, परन्तु उसकी विरासत आज भी जीवन्त है।

(संदर्भ: नरेश दास वैष्णव निम्बार्क, "यात्रा: बन्दूक से कलम तक", अध्याय 12; www.nareshswaminimbark.in)

+ विरासत की तीसरी एवं चौथी पीढ़ी

आज उन्हीं के पुत्र, वरिष्ठ अधिवक्ता श्री रामकुमार वैष्णव जी, तथा उनकी पौत्री – IAS अधिकारी श्रीमती प्रेरणा वैष्णव जी – अपने पूर्वज के संस्कारों को सँजोए हुए हैं। इसी परिवार की एक अन्य कड़ी के रूप में, श्री रामकुमार जी के पुत्र श्री नीरज प्रियदर्शी जी की धर्मपत्नी श्रीमती उषा प्रियदर्शी जी को हाल ही में हरियाणा राज्य महिला आयोग की अध्यक्ष नियुक्त किया गया है।

उषा प्रियदर्शी जी की यह यात्रा स्वयं में एक प्रेरणादायक गाथा है। राजस्थान में 12 अगस्त 1972 को जन्मीं उषा जी विगत 25 वर्षों से भारतीय जनता पार्टी के संगठन में निरंतर सक्रिय रही हैं – एक सामान्य कार्यकर्ता के रूप में अपनी यात्रा आरम्भ करते हुए, उन्होंने ओबीसी वर्ग का प्रतिनिधित्व करते हुए भाजपा ओबीसी मोर्चा की प्रदेश अध्यक्ष तथा तत्पश्चात् भाजपा महिला मोर्चा की प्रदेश अध्यक्ष जैसे महत्वपूर्ण दायित्व सफलतापूर्वक निभाए। जनवरी 2024 में महिला मोर्चा की प्रदेश अध्यक्ष नियुक्त होने के पश्चात्, दो वर्षों से अधिक इस पद पर कार्य करते हुए उन्होंने संगठन को नई ऊर्जा दी। इसी दीर्घ एवं समर्पित सेवा-यात्रा का सुफल उन्हें जून 2026 में हरियाणा राज्य महिला आयोग की अध्यक्ष के रूप में प्राप्त हुआ – एक सामान्य कार्यकर्ता से लेकर संवैधानिक पद तक की यह यात्रा, इस परिवार के सार्वजनिक-सेवा के संस्कारों को और आगे बढ़ाती है।

पदभार ग्रहण करते हुए उन्होंने कहा कि पीड़ित महिलाओं और बेटियों को त्वरित न्याय दिलाना उनकी सर्वोच्च प्राथमिकता होगी। प्रतिवर्ष रामनवमी के पावन अवसर पर परिवार अपने पैतृक गाँव में

भव्य भण्डारे का आयोजन करता है, जो क्षेत्र की सामाजिक एवं आध्यात्मिक चेतना का केन्द्र बन चुका है।

(संदर्भ: Amar Ujala; India Daily; Faridabad News24)

+ एक परम्परा की पहचान

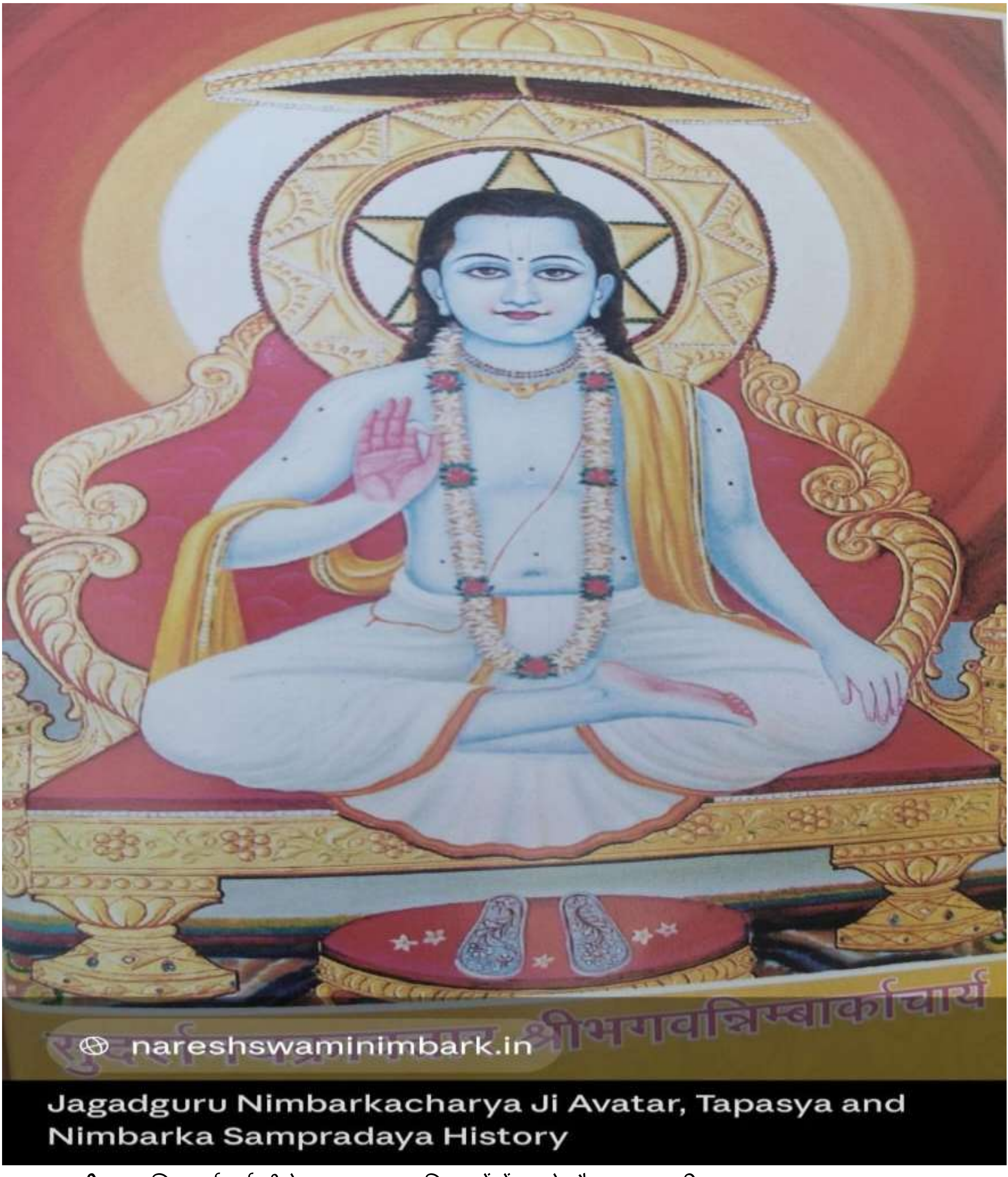
यह केवल एक परिवार की गाथा नहीं – यह उस सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा का प्रतिबिम्ब है, जिसने राष्ट्र-निर्माण में सदैव अग्रणी भूमिका निभाई है। श्री अश्विनी वैष्णव जी, बालकवि बैरागी जी, श्री रामकिशन बैरागी जी तथा उत्तराखण्ड के प्रथम मुख्यमन्त्री स्व. श्री नित्यानन्द स्वामी जी – इस परम्परा ने राष्ट्र को अनेक रत्न दिए हैं।

✅ सनातन शिक्षा: बलिदान कभी व्यर्थ नहीं जाता – यह पीढ़ियों तक संस्कार बनकर प्रवाहित होता रहता है। एक स्वतंत्रता सेनानी कभी निर्धन नहीं होता, वह राष्ट्र की आन-बान-शान होता है, जो निःस्वार्थ भाव से देश-सेवा में समर्पित रहता है।

अध्याय — 9 : जगद्गुरु निम्बार्काचार्य जी — द्वैताद्वैत सिद्धान्त, जीवन और दर्शन

— सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा एवं निम्बार्क सम्प्रदाय के आदि आचार्य —

जन्म-काल पर विद्वानों के भिन्न मत



स्पष्टीकरण: *निम्बार्काचार्य जी के जन्म-काल पर विद्वानों में मतभेद है। सम्प्रदाय की परम्परागत मान्यता उनका प्रादुर्भाव द्वापरयुगान्त (लगभग 5000 वर्ष पूर्व) मानती है, जबकि आधुनिक इतिहासकार उन्हें सामान्यतः 11वीं से 13वीं शताब्दी ईस्वी के मध्य रखते हैं। पाठक इसे श्रद्धा एवं शोध — दोनों दृष्टियों से पढ़ें।*

जन्म एवं बाल्यकाल

परम्परानुसार निम्बार्काचार्य जी का जन्म दक्षिण भारत में गोदावरी नदी के तट पर वैदूर्यपत्तन (मूंगीपैठन) में अरुण मुनि तथा जयन्ती देवी के घर हुआ। बचपन में उनका नाम नियमानन्द था।

(संदर्भ: भारतकोश — निम्बार्काचार्य; उनइन्फोज़ — निम्बार्काचार्य जीवन-परिचय)

नाम की उत्पत्ति — नीम पर सूर्य की कथा

एक प्रचलित कथा के अनुसार, एक सन्ध्या एक अतिथि-सन्त उनके आश्रम पधारे, परन्तु सूर्यास्त हो जाने के कारण भोजन ग्रहण करने में असमर्थता जताई — क्योंकि वे सूर्यास्त पश्चात् भोजन नहीं करते थे। निम्बार्काचार्य जी की प्रार्थना पर, आश्रम के निकट के नीम (निम्ब) वृक्ष पर सूर्यदेव (अर्क) तब तक प्रकाशित रहे, जब तक अतिथि ने भोजन पूर्ण नहीं कर लिया। इसी "निम्ब" और "अर्क" के संयोग से उनका नाम निम्बार्काचार्य पड़ा।

(संदर्भ: हिन्दीपथ — निम्बार्काचार्य जीवन परिचय; प्रवक्ता.कॉम)

गुरु-परम्परा — सनकादि से निम्बार्क तक

परम्परा के अनुसार भगवान नारायण ने हंस-स्वरूप में सनक, सनन्दन, सनातन एवं सनत्कुमार को यह ज्ञान दिया। सनकादि कुमारों से देवर्षि नारद ने यह ज्ञान प्राप्त किया, और नारद जी ने निम्बार्काचार्य जी को विधिपूर्वक पंचसंस्कार तथा गोपाल-मन्त्र की दीक्षा दी। इसीलिए इस सम्प्रदाय को "सनकादि सम्प्रदाय" अथवा "हंस सम्प्रदाय" भी कहा जाता है।

(संदर्भ: निम्बार्क सम्प्रदाय — विकिपीडिया; Nimbark Social Welfare)

द्वैताद्वैत सिद्धान्त — स्वाभाविक भेदाभेद

निम्बार्काचार्य जी ने वेदान्त पर "द्वैताद्वैत" अथवा "स्वाभाविक भेदाभेद" सिद्धान्त प्रतिपादित किया — अर्थात् जीव, जगत् और ब्रह्म एक ही समय में ब्रह्म से भिन्न भी हैं और अभिन्न भी। जिस प्रकार सूर्य और उसकी किरणें, अथवा सर्प और उसकी कुण्डली एक ही तत्त्व के दो रूप हैं, उसी प्रकार जीव और जगत् परब्रह्म के ही अंश हैं, फिर भी उनसे पृथक् अस्तित्व रखते हैं। यह सिद्धान्त शंकराचार्य के अद्वैत तथा रामानुजाचार्य के विशिष्टाद्वैत के मध्य एक अद्भुत समन्वय प्रस्तुत करता है।

राधा-कृष्ण की युगल उपासना

निम्बार्काचार्य जी की सबसे विशिष्ट देन है — राधा-कृष्ण की युगल उपासना का प्रवर्तन। उनके अनुसार राधा और कृष्ण एक ही तत्त्व के दो रूप हैं — कृष्ण प्राण हैं तो राधा प्राण की शक्ति। उन्होंने वेदान्त-पारिजात-सौरभ (ब्रह्मसूत्र भाष्य), वेदान्त-कामधेनु, तथा श्रीमद्भगवद्गीता पर "तत्त्व-प्रकाशिका" सहित पाँच ग्रन्थों की रचना की।

(संदर्भ: निम्बार्क सम्प्रदाय — विकिपीडिया)

आज भी जीवन्त परम्परा

राजस्थान के सलेमाबाद में निम्बार्क सम्प्रदाय की सबसे बड़ी गद्दी स्थित है, तथा वृन्दावन में बड़ी पूंज आराधना-स्थल है। उत्तर भारत में आज भी लाखों अनुयायी इस परम्परा का पालन करते हैं।

✅ **सनातन शिक्षा:** निम्बार्काचार्य जी का जीवन हमें सिखाता है कि सच्ची भक्ति में भेद और अभेद, दोनों का समन्वय सम्भव है — जिस प्रकार सूर्य और उसकी किरण अलग होकर भी एक हैं, उसी प्रकार जीव और ईश्वर का सम्बन्ध है। यही सनातन दर्शन की गहनतम शिक्षाओं में से एक है।

अध्याय — 10 : सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा की जड़ें — हम्पी में शबरी ने राम को खिलाए थे जूठे बेर

एक सैनिक की तीर्थ-यात्रा, किष्किंधा की पावन भूमि पर

किष्किंधा की पावन भूमि का प्रवेश-द्वार

सेवा-निवृत्ति के पश्चात्, भारतीय सेना के एक अनुशासित सैनिक के रूप में जब मुझे अपनी प्रथम नागरिक नियुक्ति प्राप्त हुई, तो वह स्थान था – हॉस्पेट (होसपेटे), कर्नाटक, तुंगभद्रा नदी के तट पर बसा वही ऐतिहासिक नगर, जिसने युगों-युगों से भारतीय इतिहास की अनेक करवटों को अपनी आँखों से देखा है। हॉस्पेट से मात्र तेरह किलोमीटर की दूरी पर स्थित हम्पी, जो कभी विजयनगर साम्राज्य की गौरवशाली राजधानी हुआ करती थी और आज यूनेस्को द्वारा विश्व धरोहर घोषित है, वही पावन भूमि है जहाँ रामायण के किष्किंधाकाण्ड की अमर घटनाएँ घटित हुई थीं। यह तीर्थ-यात्रा मैंने प्रथम बार 1 जनवरी 2009 को सम्पन्न की थी, और उस दिन जो अनुभूति हुई, वह आज भी स्मृति-पटल पर उतनी ही जीवंत है।

एक सैनिक के रूप में जीवनभर अनुशासन एवं कर्तव्य को सर्वोपरि मानते हुए, जब मैंने इस भूमि पर कदम रखा, तो अनुभव हुआ कि यह केवल एक पर्यटन-स्थल नहीं, अपितु एक जीवंत तीर्थ है – जहाँ प्रत्येक शिला, प्रत्येक जलधारा स्वयं में रामायण-कालीन गाथाओं को समेटे हुए है।

शबरी-मातंग प्रसंग – वैष्णव बैरागी परम्परा का आदि प्रतीक

ऋष्यमूक पर्वत, जिसे मातंग पर्वत के नाम से भी जाना जाता है, के समीप महर्षि मातंग का पावन आश्रम स्थित था। भील जनजाति की एक साधारण कन्या, माता शबरी, ने वर्षों तक अत्यंत निष्काम भाव से अपने गुरु महर्षि मातंग की सेवा की। न कोई अपेक्षा, न कोई प्रतिफल की कामना – केवल शुद्ध, निष्कलंक सेवा-भाव। यही निष्काम सेवा-भाव आगे चलकर सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा का मूल आधार बना, जो आज भी इस पंथ के साधकों के जीवन का केंद्रीय सिद्धांत है।

महासमाधि से पूर्व, महर्षि मातंग ने अपनी परम शिष्या शबरी को यह दिव्य आशीर्वाद दिया कि स्वयं भगवान श्रीराम एक दिन उनकी कुटिया में पधारेंगे। वर्षों की अटूट प्रतीक्षा एवं अखंड श्रद्धा के पश्चात्, जब प्रभु श्रीराम अंततः उस कुटिया में पहुँचे, तो शबरी ने अपार भक्ति-भाव से, स्वयं चख-

चखकर, केवल मीठे बेर उन्हें अर्पित किए — यह सुनिश्चित करने हेतु कि प्रभु को कोई खट्टा फल न मिले।

"भगवान श्रीराम ने बिना किसी जाति-भेद के, केवल भक्ति के आधार पर वे जूठे बेर सहर्ष ग्रहण किए।"

सनातन धर्म में यह प्रसंग नवधा भक्ति का प्रत्यक्ष एवं जीवंत उदाहरण माना जाता है, तथा वैष्णव बैरागी परम्परा की आधारशिला इसी प्रसंग में दृष्टिगोचर होती है। यह घटना हमें सिखाती है कि ईश्वर-भक्ति में जाति, कुल अथवा सामाजिक प्रतिष्ठा का कोई स्थान नहीं — केवल हृदय की शुद्धता एवं निष्काम समर्पण ही सर्वोच्च मूल्य रखते हैं।

पम्पा सरोवर से विजयनगर के स्थापत्य तक

पम्पा सरोवर के तट पर ही राम-शबरी का यह ऐतिहासिक मिलन हुआ माना जाता है। कालांतर में इसी पावन भूमि पर विजयनगर साम्राज्य की भव्य राजधानी स्थापित हुई, जिसने भारतीय स्थापत्य-कला, धर्म एवं संस्कृति को नई ऊँचाइयाँ प्रदान कीं। विरूपाक्ष मंदिर, विट्ठल मंदिर तथा अन्य अनेक भव्य मंदिर इसी क्षेत्र में स्थापित हुए, जो आज भी अपने अद्वितीय स्थापत्य-सौंदर्य के लिए विश्वविख्यात हैं। यह अत्यंत सार्थक तथ्य है कि जिस भूमि पर कभी भक्ति की सर्वोच्च मिसाल कायम हुई थी, वहीं आगे चलकर एक विशाल साम्राज्य की नींव भी रखी गई — मानो धर्म एवं शक्ति का यह संगम इस भूमि की नियति ही रहा हो।

निष्कर्ष — एक सैनिक की दृष्टि से

एक सैनिक की दृष्टि से देखा जाए, तो शबरी का चरित्र स्वयं में अनुशासन, समर्पण एवं धैर्य का सर्वोच्च आदर्श प्रस्तुत करता है — जिस प्रकार एक सैनिक बिना प्रश्न किए अपने कर्तव्य का पालन करता है, उसी प्रकार शबरी ने भी बिना किसी संदेह के, वर्षों तक अटूट श्रद्धा एवं प्रतीक्षा के साथ अपने गुरु-वचन का पालन किया। यही निष्काम कर्म एवं अटूट समर्पण-भाव सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा की आत्मा है, जो आज भी इस पावन भूमि हम्पी में जीवंत रूप से अनुभव किया जा सकता है।

✅ *सनातन शिक्षा:* एक सैनिक की तीर्थ-यात्रा है, जो न केवल भौगोलिक अन्वेषण है, अपितु आत्मिक साक्षात्कार भी है। शबरी का निष्काम भक्ति-भाव सिखाता है कि सच्ची भक्ति में जाति-कुल का कोई बंधन नहीं होता, तथा वैष्णव बैरागी परम्परा की मूल जड़ें इसी शुद्ध, निष्कलंक सेवा-भावना में निहित हैं।

(संदर्भ: वाल्मीकि रामायण – किष्किंधाकाण्ड; ASI हम्पी स्मारक-सूची; नरेश दास वैष्णव निम्बार्क, "सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा" – व्यक्तिगत तीर्थ-यात्रा, 1 जनवरी 2009)

अध्याय — 11 : सनातन परिवार, समय पर विवाह और नई पीढ़ी की दिशा

एक चिन्तन, एक आत्ममन्थन और एक सकारात्मक संकल्प

भूमिका – अनादि परम्परा की चिन्ता

सनातन धर्म अनादि है। सहस्रों वर्षों से यह संस्कृति परिवार, संस्कार, सेवा, ज्ञान, त्याग और धर्म के आधार पर चलती आई है। हमारे पूर्वजों ने जिन व्यवस्थाओं की स्थापना की, उनमें एक अत्यंत महत्वपूर्ण व्यवस्था रही है – उचित समय पर विवाह और सुदृढ़ परिवार का निर्माण। यह केवल एक सामाजिक रीति नहीं, अपितु एक ऐसी वैज्ञानिक एवं मनोवैज्ञानिक व्यवस्था थी, जो व्यक्ति, परिवार एवं समाज – तीनों के संतुलित विकास हेतु रची गई थी। किंतु वर्तमान युग में इस अनादि परम्परा के समक्ष अनेक नई चुनौतियाँ उपस्थित हो गई हैं, जिन पर गंभीर आत्ममन्थन आवश्यक है।

बदलता समय, बढ़ती चुनौतियाँ

आज अनेक युवक-युवतियाँ उच्च शिक्षा प्राप्त करते-करते विवाह-योग्य आयु पार कर जाते हैं। नौकरी की तैयारी, कैरियर की दौड़, जीवनसाथी की खोज – इन सबमें कई वर्ष व्यतीत हो जाते हैं। यह प्रवृत्ति स्वयं में कोई दोष नहीं है – शिक्षा एवं आत्मनिर्भरता निःसंदेह अत्यंत आवश्यक हैं। किंतु जब यह प्रक्रिया अनियंत्रित रूप से लंबी खिंचती चली जाती है, तो व्यक्ति अनजाने में ही अपने जीवन के उस महत्वपूर्ण पड़ाव से दूर होता चला जाता है, जहाँ पारिवारिक स्थिरता एवं संतुलन स्वाभाविक रूप से स्थापित हो सकती थी।

बढ़ती अपेक्षाएँ और जीवनशैली पर आत्मचिन्तन

विवाह के लिए अपेक्षाएँ निरन्तर बढ़ती जा रही हैं – सरकारी नौकरी, अधिक आय, विशाल सम्पत्ति। ये भौतिक मापदंड धीरे-धीरे विवाह के निर्णय में सर्वोपरि होते जा रहे हैं, जबकि पारंपरिक रूप से चरित्र, संस्कार एवं पारिवारिक सामंजस्य को ही प्राथमिकता दी जाती थी। इसके साथ ही आधुनिक जीवनशैली – देर रात्रि तक जागना, मोबाइल एवं सोशल मीडिया में अत्यधिक समय व्यतीत करना – का प्रभाव भी व्यक्तित्व एवं पारिवारिक जीवन पर स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर होता है। एक अनुशासित जीवनशैली, जो सनातन परम्परा का मूल आधार रही है, आज कहीं-न-कहीं विस्मृत होती जा रही है।

अपनी जड़ों से दूरी – एक गम्भीर चिन्ता

प्रत्येक व्यक्ति को अपनी आस्था चुनने की स्वतन्त्रता है, और सभी धर्मों का सम्मान हमारी संस्कृति का अभिन्न अंग है। किन्तु यदि अपने ही धर्म और इतिहास की जानकारी न होने के कारण नई पीढ़ी अपनी जड़ों से दूर हो जाए, तो यह गम्भीर आत्ममन्थन का विषय है। जो पीढ़ी अपने पूर्वजों के त्याग, संघर्ष एवं सांस्कृतिक गौरव से अपरिचित रहती है, वह अनायास ही अपनी पहचान एवं दिशा-बोध से भी वंचित हो जाती है। यह स्थिति किसी भी सभ्यता के दीर्घकालिक अस्तित्व के लिए चिंताजनक संकेत है।

समाधान – दोषारोपण नहीं, संस्कार और संवाद

इस समस्या का समाधान किसी पर दोषारोपण करने में नहीं, अपितु सुसंगत संस्कार एवं मुक्त संवाद स्थापित करने में निहित है। बच्चों को बचपन से ही अपने धर्म, महापुरुषों, ग्रन्थों और पारिवारिक परम्पराओं से परिचित कराया जाए – न आग्रहपूर्वक, अपितु स्नेहपूर्वक एवं तर्कसंगत ढंग से, जिससे यह ज्ञान उनके हृदय में स्वाभाविक रूप से स्थान बना सके।

माता-पिता को चाहिए कि वे बच्चों के मित्र बनें, उनकी बात धैर्यपूर्वक सुनें। एक सैनिक के अनुशासन-बोध से यह स्पष्ट है कि अनुशासन कभी भी दमन से नहीं, अपितु सम्मान एवं विश्वास से स्थापित होता है – यही सिद्धांत पारिवारिक संबंधों पर भी समान रूप से लागू होता है। समाज को भी अपनी सोच में संतुलन लाना होगा – केवल धन-पद ही विवाह का आधार न बने, संस्कार और चरित्र भी उतने ही महत्वपूर्ण हैं। जब तक समाज स्वयं इस संतुलित दृष्टिकोण को नहीं अपनाएगा, तब तक युवा पीढ़ी पर भी उचित मार्गदर्शन का प्रभाव सीमित ही रहेगा।

✅ *सन्देश:* सनातन धर्म केवल मन्दिरों में नहीं, अपितु परिवारों में जीवित रहता है। जब परिवार सुदृढ़ होंगे, तब समाज सुदृढ़ होगा। यह एक शाश्वत सत्य है कि किसी भी राष्ट्र की वास्तविक शक्ति उसके परिवारों की सुदृढ़ता में निहित होती है – जिस प्रकार एक सुगठित सेना अनुशासित इकाइयों से बनती है, उसी प्रकार एक सुदृढ़ समाज सुसंस्कृत परिवारों से निर्मित होता है।

उपसंहार – एक संकल्प

आइए संकल्प लें कि हम अपने बच्चों को केवल आधुनिक शिक्षा ही नहीं, अपितु सनातन संस्कृति, नैतिकता, परिवार, सेवा और राष्ट्रप्रेम के संस्कार भी दें। यह संतुलन ही हमारी आने वाली पीढ़ियों को न केवल सफल, अपितु सुसंस्कृत एवं जड़ों से जुड़ा हुआ भी बनाएगा। यही इस अध्याय का मूल संदेश है और यही सनातन परम्परा की वह सनातनता है, जिसे प्रत्येक युग में नए सिरे से जीवंत रखना हमारा कर्तव्य है।

(संदर्भ: यह लेख संस्थापक-सम्पादक नरेश दास वैष्णव निम्बार्क जी के व्यक्तिगत चिन्तन एवं अनुभव पर आधारित है)

लेखक-परिचय नरेश दास वैष्णव 'निम्बार्क'

सेवानिवृत्त सैन्य अधिकारी | सनातन वैष्णव इतिहासकार | संस्थापक-सम्पादक

नरेश दास वैष्णव निम्बार्क जी का जन्म हरियाणा प्रांत के ग्राम रामनगर, गन्नौर, सोनीपत में एक साधारण किसान परिवार में हुआ। मिट्टी से जुड़े इस परिवेश ने ही उनके भीतर परिश्रम, अनुशासन एवं धरा से जुड़ाव के संस्कार बचपन से ही रोपित कर दिए थे – संस्कार, जो आगे चलकर उनके सम्पूर्ण जीवन-दर्शन की आधारशिला बने।

भारतीय सेना की आर्मी सर्विस कोर (ASC) में सेवारत रहते हुए उन्होंने राष्ट्र-सेवा को अपना प्रथम धर्म माना। वर्ष 1999 में उन्होंने ऑपरेशन विजय – कारगिल युद्ध – में सक्रिय योगदान दिया, जहाँ उन्होंने विषम भौगोलिक एवं सामरिक परिस्थितियों में अपने कर्तव्य का निर्वहन किया। इसके पश्चात्, वर्ष 2000 में सिएरा लियोन में संयुक्त राष्ट्र शांति मिशन के अंतर्गत भी उन्होंने अपनी सेवाएँ अर्पित कीं – एक ऐसा अनुभव, जिसने उन्हें न केवल राष्ट्रीय, अपितु अंतरराष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य से भी मानवता, कर्तव्य एवं अनुशासन के मूल्यों से परिचित कराया।

सेवानिवृत्ति के पश्चात्, विगत अठारह वर्षों से वे सनातन वैष्णव बैरागी परम्परा एवं निम्बार्क सम्प्रदाय पर गहन शोध-कार्य में पूर्णतः समर्पित हैं। एक सैनिक के अनुशासन एवं धैर्य को उन्होंने इतिहास-लेखन की तपस्या में रूपांतरित कर दिया। इस दीर्घकालिक साधना के फलस्वरूप उन्होंने चौदह पुस्तकें – छह हिन्दी में तथा आठ अंग्रेज़ी में – रचीं, जो आज विश्व के एक सौ नब्बे से अधिक देशों में पढ़ी जा रही हैं। यह तथ्य स्वयं में इस बात का प्रमाण है कि सनातन संस्कृति एवं भारतीय ऐतिहासिक अन्वेषण के प्रति वैश्विक स्तर पर कितनी गहन रुचि विद्यमान है।

वे "वैश्विक सनातन वैष्णव बैरागी सेवा संगठन" के संस्थापक तथा "सनातन भारत नया सवेरा" ई-मासिक पत्रिका के संस्थापक-सम्पादक हैं। उनका सम्पूर्ण जीवन इस एक ही उद्देश्य को समर्पित है – सनातन धर्म के गौरवशाली किंतु प्रायः विस्मृत हो चुके इतिहास को नई पीढ़ी तक प्रामाणिक रूप से पहुँचाना।

🌐 www.nareshswaminimbark.in

"मैं तो सनातन का एक छोटा-सा फौजी हूँ।"

यह एक पंक्ति उनके सम्पूर्ण व्यक्तित्व का सार प्रस्तुत करती है – विनम्रता, समर्पण एवं अनुशासन का ऐसा अद्भुत संगम, जो एक सच्चे सैनिक एवं एक सच्चे साधक, दोनों में समान रूप से दृष्टिगोचर होता है।

उपसंहार – सनातन की अमर यात्रा

प्रिय सनातन परिवार,

"सनातन भारत नया सवेरा" के इस अठारहवें अंक के ग्यारह अध्यायों के साथ हमने एक बार पुनः उस यात्रा को जिया, जो हजारों वर्ष पुरानी होकर भी सदैव नवीन प्रतीत होती है। रामचरितमानस के प्रसंगों से लेकर महाभारत और गीता के गूढ़ रहस्यों तक, निम्बार्काचार्य जी के दर्शन से लेकर हम्पी-किष्किंधा की पावन धरा तक – इस अंक ने हमें यह स्मरण कराया कि सनातन धर्म कोई अतीत का विषय नहीं, अपितु हमारे रक्त में प्रवाहित एक जीवन्त, सजीव परम्परा है, जो प्रत्येक युग में नए रूप में स्वयं को अभिव्यक्त करती रहती है।

महाराज दशरथ की पितृ-भक्ति की गाथा से लेकर पाण्डवों एवं कौरवों के धर्मयुद्ध तक, स्वर्णप्रस्थ की 3526 वर्षों की अविच्छिन्न ऐतिहासिक यात्रा से लेकर शबरी माता की निष्काम भक्ति तक – प्रत्येक अध्याय हमें यह सिखाता है कि धर्म, कर्तव्य एवं सत्य-निष्ठा की कसौटी पर खरा उतरना ही सच्चे सनातनी जीवन का मूल आधार है। और अंततः, सनातन परिवार तथा नई पीढ़ी की दिशा पर हुए चिंतन ने हमें यह स्मरण कराया कि यह सम्पूर्ण ऐतिहासिक गौरव तभी सार्थक है, जब वह हमारे वर्तमान परिवारों एवं भावी पीढ़ियों तक सुरक्षित पहुँचे।

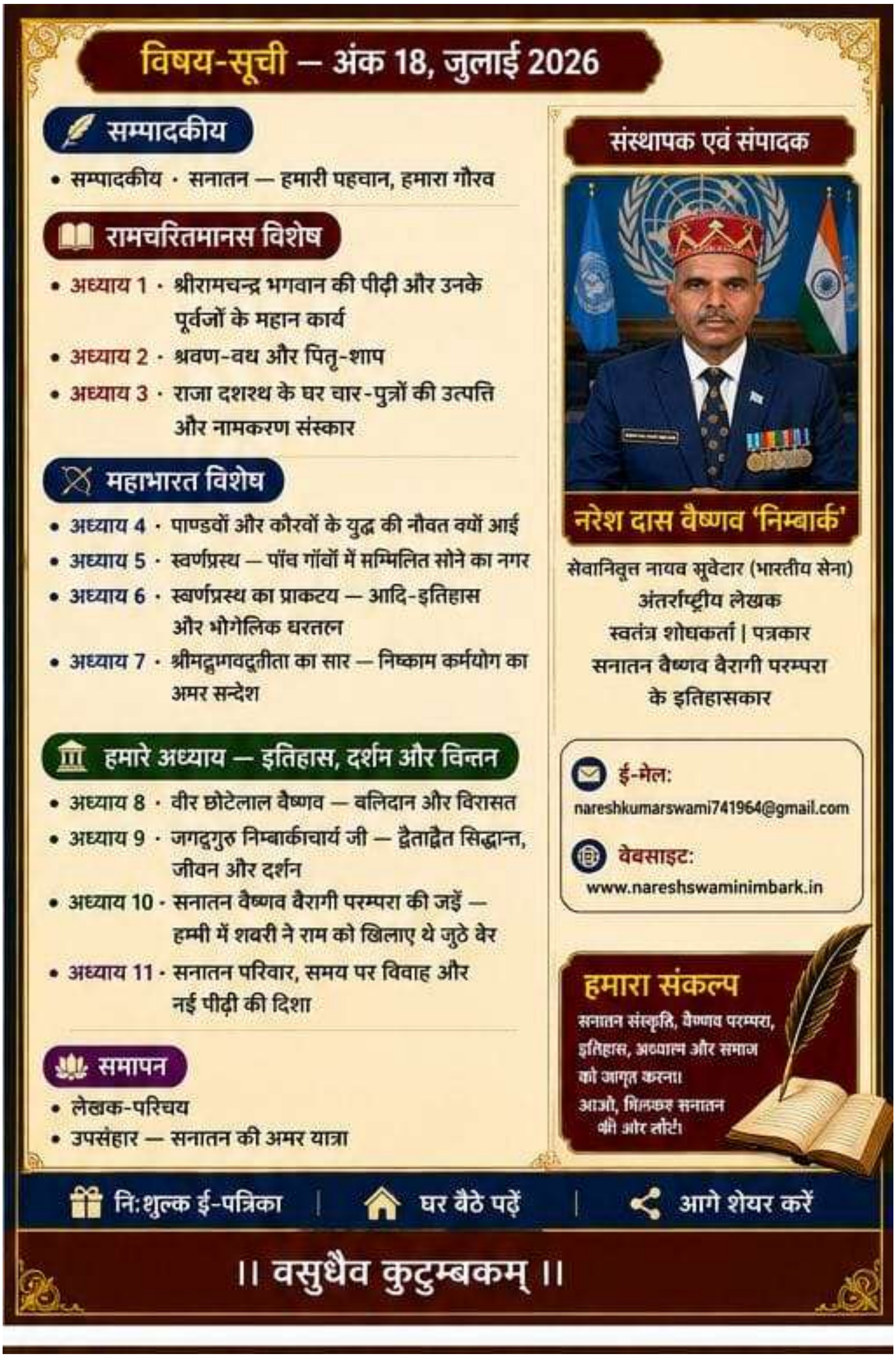
यह पत्रिका किसी भी व्यावसायिक लाभ हेतु प्रकाशित नहीं होती, अपितु केवल सनातन-प्रचार एवं अपनी जड़ों की ओर लौटने के संकल्प के साथ, एक सौ नब्बे से अधिक देशों में पूर्णतः निःशुल्क वितरित की जाती है। यह तथ्य स्वयं में इस बात का प्रमाण है कि यह प्रयास किसी व्यक्तिगत महत्वाकांक्षा से नहीं, अपितु एक निःस्वार्थ, तपस्यापूर्ण सेवा-भाव से प्रेरित है – ठीक उसी प्रकार, जिस प्रकार माता शबरी ने निष्काम भाव से अपनी सेवा अर्पित की थी।

"इतिहास को दबाया जा सकता है, मिटाया नहीं जा सकता – और जब तक ऐसे समर्पित प्रयास जारी रहेंगे, सनातन की यह गौरवगाथा हर घर तक अवश्य पहुँचेगी।"

यह पंक्ति केवल एक कथन मात्र नहीं, अपितु एक दृढ़ प्रतिज्ञा है – उस अटूट संकल्प का प्रतीक, जिसके साथ यह सम्पूर्ण शोध-यात्रा वर्षों से निरंतर आगे बढ़ रही है। जिस प्रकार एक सैनिक कभी अपने मोर्चे से पीछे नहीं हटता, उसी प्रकार यह इतिहास-लेखन का मोर्चा भी अडिग भाव से आगे बढ़ता रहेगा, जब तक सनातन की यह गौरवगाथा प्रत्येक घर, प्रत्येक हृदय तक नहीं पहुँच जाती।

जय श्री राधे! जय निम्बार्काचार्य! जय सीताराम! जय सनातन! 🙏

– नरेश दास वैष्णव निम्बार्क | www.nareshswaminimbark.in



विषय-सूची — अंक 18, जुलाई 2026
सम्पादकीय
• सम्पादकीय · सनातन — हमारी पहचान, हमारा गौरव
रामचरितमानस विशेष
• अध्याय 1 · श्रीरामचन्द्र भगवान की पीढ़ी और उनके पूर्वजों के महान कार्य
• अध्याय 2 · श्रवण-वध और पितृ-शाप
• अध्याय 3 · राजा दशरथ के घर चार-पुत्रों की उत्पत्ति और नामकरण संस्कार
महाभारत विशेष
• अध्याय 4 · पाण्डवों और कौरवों के युद्ध की नौबत क्यों आई
• अध्याय 5 · स्वर्णप्रस्थ — पाँच गाँवों में सम्मिलित सोने का नगर
• अध्याय 6 · स्वर्णप्रस्थ का प्राकट्य — आदि-इतिहास और भौगोलिक धरातल
• अध्याय 7 · श्रीमद्भगवद्गीता का सार — निष्काम कर्मयोग का अमर सन्देश
हमारे अध्याय — इतिहास, दर्शन और चिन्तन
• अध्याय 8 · वीर छोटेलाल वैष्णव — बलिदान और विरासत
• अध्याय 9 · जगद्गुरु निम्बार्काचार्य जी — द्वैताद्वैत सिद्धान्त, जीवन और दर्शन
• अध्याय 10 · सनातन वैष्णव वैरागी परम्परा की जड़ें — हम्पी में शबरी ने राम को खिलाए थे जुठे बेर
• अध्याय 11 · सनातन परिवार, समय पर विवाह और नई पीढ़ी की दिशा
समापन
• लेखक-परिचय
• उपसंहार — सनातन की अमर यात्रा
संस्थापक एवं संपादक
नरेश दास वैष्णव 'निम्बार्क'
सेवानिवृत्त नायब सूबेदार (भारतीय सेना)
अंतर्राष्ट्रीय लेखक
स्वतंत्र शोधकर्ता | पत्रकार
सनातन वैष्णव वैरागी परम्परा के इतिहासकार
ई-मेल:
nareshkumarswami741964@gmail.com
वेबसाइट:
www.nareshswaminimbark.in
हमारा संकल्प
सनातन संस्कृति, वैष्णव परम्परा, इतिहास, अध्यात्म और समाज को जागृत करना।
आओ, मिलकर सनातन की ओर लौटें।
नि:शुल्क ई-पत्रिका | घर बैठे पढ़ें | आगे शेयर करें
।। वसुधैव कुटुम्बकम् ।।